



AFR

छत्तीसगढ़ उच्च न्यायालय, बिलासपुर

द्वितीय अपील संख्या 484 वर्ष 2006

निर्णय सुरक्षित दिनांक: 22-1-2020

निर्णय सुनाया दिनांक: 20-2-2020

भीखम साव, पुत्र रामकिशुन, (मूल वादी प्रतिनिधि इस प्रकार हैं। मृत्यु हो गई) उनके कानूनी प्रतिनिधि

1. श्रीमती चमेली देवी, पत्नी स्वर्गीय भीखम साव, आयु लगभग 60 वर्ष।
2. शोभनाथ गुप्ता, पुत्र स्वर्गीय भीखम साव, आयु लगभग 42 वर्ष।
3. प्रकाशचंद गुप्ता, पुत्र स्वर्गीय भीखम साव, आयु लगभग 32 वर्ष।

क्रमांक 1, 2 और 3 सभी निवासी ग्राम पिंडरा, थाना बलरामपुर, तहसील पाल, जिला सरगुजा (छ.ग.)।

4. राजवंती, पुत्री स्वर्गीय भीखम साव और पत्नी जहेन्द्र प्रसाद गुप्ता, उम्र लगभग 40 वर्ष, निवासी ग्राम बासेन, पोस्ट बासेन, थाना राजपुर, जिला सरगुजा (छ.ग.)।

5. सुकांति उर्फ गुडुलुवा, पुत्री स्वर्गीय भीखम साव, और पत्नी बालकिशुन गुप्ता, उम्र लगभग 37 वर्ष, निवासी बलरामपुर, जिला सरगुजा (छ.ग.)।

6. चंद्रावती @ डेलवा, स्वर्गीय भीखम साव की पुत्री तथा विजय गुप्ता की पत्नी, उम्र लगभग 35 वर्ष, निवासी ग्राम हरिहरगंज, थाना पोस्ट हरिहरगंज, जिला पलामू, झारखंड

(प्रतिवादी) अपीलकर्ता

बनाम

1. (क) पंछेरी देवी, स्वर्गीय रंगनाथ की पत्नी (मृत्यु हो गई)
2. (ख) रमेश, पुत्र रंगनाथ सिंह (मृत्यु हो गई)

नोट: दोनों मूल प्रतिवादी रंगनाथ सिंह के कानूनी उत्तराधिकारी थे तथा उनकी मृत्यु के पश्चात (सं. 1 तथा 2) रिकॉर्ड पर लाए गए तथा उनकी मृत्यु के पश्चात रमेश के एल.आर. रिकॉर्ड पर लाए गए।



2. (क) श्रीमती चंद्रावती सिंह, पत्नी स्वर्गीय रमेश सिंह, उम्र 42 वर्ष, जाति राजपूत, व्यवसाय गृहिणी,

2. (ख) संकेत सिंह, पुत्र स्वर्गीय रमेश सिंह, उम्र 28 वर्ष, जाति राजपूत, व्यवसाय सेवा।

2. (ग) अभिषेक सिंह, पुत्र स्वर्गीय रमेश सिंह, उम्र लगभग 23 वर्ष, जाति राजपूत, व्यवसाय छात्र।

2. (घ) अभिजीत सिंह, पुत्र स्वर्गीय रमेश सिंह, उम्र लगभग 17 वर्ष, जाति राजपूत, व्यवसाय छात्र, प्राकृतिक अभिभावक मां के माध्यम से।

सभी निवासी ग्राम सिवनी, थाना बलरामपुर, तहसील पाल, जिला सरगुजा (छ.ग.)।

(स) उमेश (मृत) कानूनी प्रतिनिधियों के माध्यम से

2सी-ए. चिंता सिंह, पत्नी स्वर्गीय उमेश सिंह, उम्र 55 वर्ष,

2सी-बी. राकेश सिंह, पुत्र स्वर्गीय उमेश सिंह, उम्र 30 वर्ष,

2सी-सी. रितेश सिंह, पुत्र स्वर्गीय उमेश सिंह, उम्र 25 वर्ष,

सभी निवासी बलरामपुर, पी.एस. तहसील एवं पोस्ट बलरामपुर, जिला बलरामपुर-रामानुजगंज (छ.ग.)

2. मुद्रिका चौबे (मृत) कानूनी प्रतिनिधियों के माध्यम से

2ए. सिद्धनाथ चौबे, पुत्र मुद्रिका चौबे, उम्र 55 वर्ष,

2बी. रमेश चौबे, पुत्र मुद्रिका चौबे, उम्र 50 वर्ष,

2सी. लव चौबे, पुत्र मुद्रिका चौबे, उम्र 48 वर्ष,

2डी. कुश चौबे, पुत्र मुद्रिका चौबे, उम्र 45 वर्ष,

सभी निवासी बलरामपुर, थाना हैं। तहसील एवं पोस्ट बलरामपुर, जिला बलरामपुर-रामानुजगंज (छ.ग.)

3. छत्तीसगढ़ राज्य, कलेक्टर, सरगुजा (छ.ग.) के माध्यम से

(अपीलकर्ता) प्रतिवादी

अपीलकर्ताओं के लिए: श्री सुनील त्रिपाठी और सुश्री वर्षा शर्मा, अधिवक्ता।

प्रतिवादी संख्या 2(का) से (घा), 2सी-ए से 2सी-सी और 2ए से 2डी के लिए: -श्री रवीश चंद अग्रवाल, वरिष्ठ अधिवक्ता श्री मनोज परांजपे और श्री अनुराग सिंह, अधिवक्ताओं के साथ।

प्रतिवादी संख्या 3/राज्य के लिए: -

श्री रवि कुमार भगत, उप सरकारी अधिवक्ता।

माननीय श्री न्यायमूर्ति संजय के. अग्रवाल



सी.ए.वी. निर्णय

1. यह द्वितीय अपील मूल वादी/अपीलकर्ताओं के विधिक प्रतिनिधियों द्वारा व्यवहार प्रक्रिया संहिता की धारा 100 के तहत प्रस्तुत की गई थी, जिसे निम्नलिखित महत्वपूर्ण विधिक प्रश्न तय करने हेतु स्वीकार किया गया:

"क्या प्रथम अपीलीय न्यायालय द्वारा विचारणीय न्यायालय के निर्णय और डिक्री को पलटते हुए यह निष्कर्ष निकालना उचित था कि प्रतिवादियों ने प्रतिकूल कब्जे के माध्यम से अपनी स्वत्व की उपाधि प्रमाणित कर ली है?"

[सुविधा की दृष्टि से, यहां पर पक्षकारों को वही दर्जा और क्रम दिया जाएगा जो विचारण न्यायालय में वादपत्र में दिया गया था।]

2. मूल वादी भीखम साव ने कब्जा, मेस्से मुनाफा (मालिकाना लाभ), और स्थायी निषेधाज्ञा बाबत वाद प्रस्तुत किया, जिसमें यह कहा गया कि उन्होंने विवादित भूमि को अखंडलेश्वर प्रसाद सिंह से दिनांक 7-12-1955 के पंजीकृत विक्रय विलेख (प्रदर्श पी 1) के माध्यम से खरीदा था और भूमि के कब्जे में आ गए थे। उन्होंने भूमि का राजस्व भुगतान करना शुरू कर दिया और 1967-68 तक भूमि के विभिन्न राजस्व अभिलेखों में अपना नाम दर्ज एवं पंजीकृत कराते हुए कब्जे में बने रहे। परंतु 1968 में, मूल प्रतिवादी क्रमांक प्रारंभ 1 रंगनाथ सिंह (जो वाद की सुनवाई के दौरान मृत्यु हो गई) ने जबरदस्ती उन्हें बेदखल कर दिया और विवादित भूमि की खेती शुरू कर दी। प्रतिवादी क्रमांक 2, जो एक शराब ठेकेदार थे, ने प्रतिवादी क्रमांक 1 के साथ मिलकर उनकी मदद की। इसलिए, वादी स्वत्वधारी होने के नाते भूमि पर कब्जे के डिक्री प्राप्त करने के अधिकारी हैं।
3. दोनों प्रतिवादियों ने संयुक्त जवाबदावा प्रस्तुत किया, जिसमें अन्य तथ्यों के साथ यह कथन किया गया कि उनका कब्जा वादग्रस्त भूमि पर 1955 से पहले से लगातार और निर्विवाद रूप से है और इस प्रकार, वाद सीमा-समय द्वारा वर्जित है और चूंकि वे पिछले 25 वर्षों से कब्जे में हैं, इसलिए प्रतिकूल कब्जा के सिद्धांत को लागू करते हुए उन्होंने अपने स्वत्व का अधिकार प्रतिकूल कब्जा के माध्यम से प्रमाणित कर लिया है। उन्होंने 9-5-1974 को संशोधन के माध्यम से एक दलील पेश की कि यह वादी के पिता की बेनामी संपत्ति थी, क्योंकि वादी के पिता ने उक्त संपत्ति को वादी के नाम पर 1955 में खरीदा था जब वादी नाबालिग था और उसके पिता ने उक्त भूमि को प्रतिवादियों के



पक्ष में स्थानांतरित कर दिया था और इस प्रकार पक्षकारों के बीच विवाद समाप्त हो गया था, इसलिए वादी कभी भी उक्त संपत्ति का स्वामी नहीं था और वाद को खारिज किया जाना चाहिए।

4. उक्त दलील के अनुसार, वादी ने 31-7-1974 को परिवाद में परिणामिक संशोधन किया, जिसमें अन्य बातों के साथ यह कहा गया कि संपत्ति वादी के पूर्ण स्वत्व में थी और उसके पिता का उक्त भूमि पर कोई बेनामी स्वत्व नहीं था और उसे प्रतिवादियों के पक्ष में उक्त भूमि स्थानांतरित करने का कोई अधिकार नहीं था तथा दिनांक 16-6-1961 (Ex.D-1) का समझौता उसके पिता द्वारा प्रतिवादी क्रमांक 1 के पक्ष में निष्पादित नहीं किया गया था और यह एक झूठा और मनगढ़ंत दस्तावेज़ है, अतः वादी को स्वत्व और कब्जे की घोषणा का अधिकारी है।
5. विचारण न्यायालय ने प्रारंभ में 13-3-1975 को दिए गए निर्णय द्वारा वाद को सीमा-काल के कारण अमान्य कर दिया, जिसे प्रथम अपीलीय न्यायालय ने 10-12-1975 को वादी द्वारा प्रस्तुत अपील पर पुनर्विचार के लिए वापस भेज दिया, और पुनर्विचार के बाद, विचारण न्यायालय ने 30-8-1979 को वाद खारिज कर दिया। इसके पश्चात, निम्न अपीलीय न्यायालय ने 16-4-1981 को प्रथम अपील स्वीकार की और वाद को स्वीकार कर लिया, किंतु 14-10-1986 को मध्यप्रदेश उच्च न्यायालय ने दोनों निचली अदालतों के निर्णय एवं डिक्री को निरस्त कर दिया और मामले को CPC के आदेश 6 नियम 17 के अंतर्गत आवेदन को स्वीकृति प्रदान करते हुए पुनः विचार के लिए विचारण न्यायालय को वापस कर दिया।
6. मध्यप्रदेश उच्च न्यायालय के निर्णय के अनुसार, 12-12-1997 को विचारण न्यायालय ने निर्णय का पालन करते हुए मामले पर पुनर्विचार किया और वाद को स्वीकार कर लिया, लेकिन प्रथम अपीलीय न्यायालय ने प्रतिवादियों द्वारा प्रस्तुत अपील को स्वीकार कर लिया और वाद को यह कहते हुए खारिज कर दिया कि प्रतिवादियों ने प्रतिकूल कब्जे के माध्यम से अपने स्वत्व का अधिकार प्रमाणित कर लिया है और यह भी ठहराया कि Ex.D-1 बिक्री का अनुबंध एक वैध दस्तावेज़ है।
7. प्रथम अपीलीय न्यायालय द्वारा वाद को खारिज करने के निर्णय एवं डिक्री की वैधता और शुद्धता पर प्रश्न उठाते हुए, मूल वादी के विधिक उत्तराधिकारी (LRs) ने इस द्वितीय अपील को प्रस्तुत किया है, जिसमें विधि से संबंधित महत्वपूर्ण प्रश्नों को प्रस्तुत किया गया है, जैसा कि इस निर्णय के प्रारंभिक अनुच्छेद में उल्लिखित किया गया है।



8. श्री सुनील त्रिपाठी, जो अपीलकर्ताओं (मूल वादी के उत्तराधिकारी / कानूनी प्रतिनिधि) की ओर से पेश हुए, ने प्रस्तुत किया कि वादी 7-12-1955 को निष्पादित दस्तावेज़ Ex.P-1 के आधार पर विवादित संपत्ति का स्वामी है, जिसे अखंडलेश्वर प्रसाद सिंह से खरीदा गया था और जिसे विचारण न्यायालय में प्रस्तुत साक्ष्य द्वारा प्रमाणित किया गया है। न्यायालय और प्रथम अपीलीय न्यायालय ने Ex.D-1 को वादी के पिता द्वारा प्रतिवादियों के पक्ष में निष्पादित एक वैध बिक्री अनुबंध माना है, फिर भी यह निष्कर्ष नहीं निकाल सकते थे कि प्रतिवादियों ने प्रतिकूल कब्जे के माध्यम से अपने स्वत्व को प्रमाणित कर दिया है, क्योंकि यह स्थापित विधि- का सिद्धांत है कि बिक्री अनुबंध के तहत प्राप्त कब्जा हमेशा अनुमति-प्राप्त होता है और यह कभी भी मूल स्वामी के विरुद्ध प्रतिकूल कब्जा नहीं बन सकता, जैसा कि माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा स्थापित किया गया है। माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा **Mohan Lal (deceased) through his LRs. Kachru and others v. Mirza Abdul Gaffar and another (1996) 1 SCC 639** के मामले में स्थापित कानून के अनुसार किया गया है।

वादी के पक्ष में तर्क दिया गया कि जिस व्यक्ति, अखंडलेश्वर प्रसाद सिंह, से वादी ने संपत्ति खरीदी, उन्होंने DW-4 के रूप में गवाही दी और यह स्पष्ट रूप से स्वीकार किया कि संपत्ति का स्थानांतरण हुआ था, लेकिन वादी के पिता के पक्ष में।

इसके अतिरिक्त, प्रतिवादी क्रमांक 2, जिसे DW-1 के रूप में परीक्षण किया गया, ने अपनी गवाही के कंडिका 7 में स्पष्ट रूप से स्वीकार किया कि वह मूल स्वामी के लाइसेंसी के रूप में भूमि की खेती कर रहा था और 1969 तक स्वामी के साथ उपज साझा करता था।

इस प्रकार, प्रथम अपीलीय न्यायालय द्वारा प्रतिवादियों के प्रतिकूल कब्जे के माध्यम से स्वत्व प्रमाणित करने के निष्कर्ष को कानून के प्रश्न को वादी के पक्ष में और प्रतिवादियों के विरुद्ध उत्तर देकर निरस्त किया जाना चाहिए।

9. श्री रविश चंद अग्रवाल, विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता, जो कि प्रतिवादियों/प्रतिवादियों की ओर से उपस्थित हुए और प्रस्तुत किया कि: -

1. वादी का वाद स्पष्ट रूप से स्वत्व के आधार पर संपत्ति के कब्जे के लिए था और प्रतिवादियों ने वादी के स्वत्व को अस्वीकार कर दिया है। यह आवश्यक है कि न्यायालय वादी के स्वत्व पर निर्णय दे, भले ही कब्जे में मौजूद प्रतिवादियों ने प्रतिकूल कब्जे का दावा किया हो।



2. प्रारंभिक दायित्व वादी पर होता है कि वह अपना स्वत्व प्रमाणित करे, और एक बार जब दस्तावेजों और अन्य साक्ष्यों के आधार पर स्वत्व स्थापित हो जाता है, तभी प्रतिवादी पर यह दायित्व आता है कि वह यह साबित करे कि उसने प्रतिकूल कब्जे द्वारा अपना स्वत्व प्रमाणित कर लिया है। इस संबंध में सर्वोच्च न्यायालय के Indira v. Arumugam and another (1998) 1 SCC 614 and M. Durai v. Muthu and others (2007) 3 SCC 114 में पारित निर्णयो का हवाला दिया गया।

3. एक बार जब संपत्ति का अधिकार या स्वत्व खो जाता है और कब्जा पुनः प्राप्त करने का अवसर समाप्त हो जाता है, तो वह न तो किसी पुनः प्रवेश द्वारा और न ही स्वत्व की बाद की स्वीकृति द्वारा दोबारा स्थापित किया जा सकता है। क्योंकि एक बार जब स्वत्व प्रभावी रूप से स्थानांतरित हो जाता है, जैसे कि पूर्व स्वामी द्वारा विधिवत अंतरण किया गया हो, तो वह दोबारा वापस नहीं आ सकता। इस संबंध में सर्वोच्च न्यायालय के द्वारा पारित निर्णय "रविंदर कौर ग्रेवाल और अन्य बनाम मनजीत कौर और अन्य (2007) 3 SCC 114 का हवाला दिया गया।

10. मैंने पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ताओं की बातों को ध्यानपूर्वक सुना, उनके द्वारा ऊपर प्रस्तुत किए गए प्रतिद्वंद्वी तर्कों पर विचार किया और साथ ही अत्यंत सावधानी एवं गहन निरीक्षण के साथ अभिलेखों (रिकॉर्ड) का अवलोकन किया।

11. पहले दौर के मुकदमे में, उच्च न्यायालय, मध्य प्रदेश ने 14.10.1986 को दिए गए निर्णय द्वारा प्रतिवादियों द्वारा प्रस्तुत द्वितीय अपील को इस उद्देश्य से पुनः विचार के लिए वापस प्रेषित किया कि पक्षकारों को वाद पत्र में संशोधन प्रस्तुत करने का अवसर दिया जाए कि क्या वादपत्र में उल्लेखित समझौता विलेख (Ex.D-1) कूटरचित है या नहीं। तदनुसार, वादपत्र में संशोधन किया गया जिसमें यह अभिवादन किया गया कि दिनांक 16-6-1961 का समझौता (Ex.D-1) वादी के पिता राम किशुन साव द्वारा निष्पादित नहीं किया गया था और यह एक कूटरचित दस्तावेज़ है, जबकि प्रतिवादियों ने यह अभिवादन किया कि वे वर्ष 1955 से पूर्व से ही कब्जे में हैं, वाद परिसीमा द्वारा वर्जित है और वादी के पिता ने उनके पक्ष में बिक्री अनुबंध (Ex.D-1) निष्पादित किया था, अतः वे निरंतर कब्जे में हैं। इसके बाद, पक्षकारों ने साक्ष्य प्रस्तुत किए। दूसरे दौर में, विचारण न्यायालय ने यह निर्णय दिया कि वादी वाद



भूमि का स्वत्वधारी है क्योंकि इसे नकद ₹ 1,500/- के विचार मूल्य पर दिनांक 7-12-1955 को अखंडलेश्वर प्रसाद सिंह से क्रय किया गया था (Ex.P-1), जिसमें प्रतिवादियों ने जबरन वादी को बेदखल कर दिया और वाद को डिक्री कर दिया, जिसे प्रथम अपीलीय न्यायालय ने पलट दिया और यह निर्णय दिया कि (Ex.D-1) कूटरचित या मनगढ़ंत नहीं है, बल्कि एक वैध दस्तावेज़ है।

12. स्वत्व के आधार पर स्थायी संपत्ति के कब्जे के लिए वाद, परिसीमा अधिनियम, 1963 के अनुच्छेद 65 द्वारा शासित होता है, जो इस प्रकार है: -

65.	स्थायी संपत्ति या उसमें किसी हित के कब्जे के लिए स्वत्व के आधार पर।	बारह वर्ष	जब प्रतिवादी का कब्जा वादी के प्रति प्रतिकूल हो जाता है।
-----	---	-----------	--

13. उपरोक्त प्रावधान के अवलोकन से यह स्पष्ट है कि जब वाद स्वत्व के आधार पर दखल के लिए आधारित होता है, तो एक बार वादी द्वारा प्रासंगिक दस्तावेजों और सहायक साक्ष्यों के आधार पर स्वत्व स्थापित कर दिया जाता है, तब तक प्रतिवादी द्वारा निर्धारित अवधि के लिए प्रतिकूल दखल प्रमाणित किए बिना, वादी को वाद से वंचित नहीं किया जा सकता। देखें इंदिरा (supra)।

14. इसी प्रकार, सर्वोच्च न्यायालय ने M. Durai (supra) में धारा 65, परिसीमा अधिनियम, 1963 से संबंधित मामले में यह माना है कि धारा 65 के तहत, एक बार जब वादी अपना स्वत्व प्रमाणित कर देता है, तो भार प्रतिवादी पर स्थानांतरित हो जाता है कि वह यह स्थापित करे कि उसने विपरीत कब्जे के माध्यम से अपना स्वत्व पूर्ण कर लिया है। इस स्थिति में, वादी को न केवल अपना स्वत्व प्रमाणित करना अनिवार्य था, बल्कि उसे वाद प्रस्तुत करने की तिथि से बारह वर्ष पूर्व तक का कब्जा भी प्रमाणित करना आवश्यक था।

15. वह वाद, जिससे यह अपील उत्पन्न हुई है, स्वत्व के आधार पर स्वत्व के लिए प्रस्तुत किया गया था, जिसमें विशेष रूप से यह उल्लेख किया गया था कि वादी ने दिनांक 7-12-1955 को दस्तावेज़ Ex.P-1 के माध्यम से अखंडलेश्वर प्रसाद सिंह से विवादित भूमि खरीदी थी, जिसे विचारण न्यायालय ने यह निष्कर्ष निकालते हुए प्रमाणित पाया कि वादी ने विवादित भूमि को पंजीकृत बिक्री विलेख द्वारा खरीदा था। जबकि, प्रथम अपीलीय न्यायालय ने इसे स्वीकार नहीं किया और यह निष्कर्ष निकाला कि प्रतिवादी 1955 से पहले अर्थात् 7-12-1955 से ही कब्जे में हैं।



16. Ex.P-1 एक पंजीकृत बिक्री विलेख है, जो दिनांक 7-12-1955 को अखंडलेश्वर प्रसाद सिंह द्वारा वादी के पक्ष में निष्पादित किया गया था। अखंडलेश्वर प्रसाद सिंह को DW-4 के रूप में परीक्षण किया गया है। अपने मुख्य परीक्षा के परिच्छेद 1 में, उन्होंने स्पष्ट शब्दों में यह स्वीकार किया है कि 1954-55 में उन्होंने वाद भूमि को राम किशुन साव – जो कि वादी के पिता हैं, के पक्ष में स्थानांतरित कर दिया था और उन्होंने राम किशुन साव से बिक्री मूल्य प्राप्त कर लिया था। इस वक्तव्य को पढ़ने पर इसमें कोई संदेह नहीं रह जाता कि DW-4 द्वारा वादी के पिता के पक्ष में भूमि का अंतरण किया गया था। उन्होंने Ex.P-1 को भी प्रमाणित किया है और आगे यह भी कहा कि बिक्री विलेख के निष्पादन से पूर्व, वह वाद भूमि के कब्जे में थे। अतः, उपर्युक्त साक्षी के बयान द्वारा यह प्रमाणित होता है कि अखंडलेश्वर प्रसाद सिंह वाद भूमि के स्वामी थे और उन्होंने यह भूमि वादी के पक्ष में उनके अभिभावक पिता राम किशुन साव के माध्यम से बेच दी, जिससे वादी स्वत्व धारक (Title Holder) बन गए। बिक्री की घटना को बिक्री विलेख के लेखक – विष्णु प्रसाद गुप्ता (PW-3) द्वारा भी प्रमाणित (Proved) किया गया, जिन्होंने स्पष्ट रूप से कहा कि बिक्री विलेख अखंडलेश्वर प्रसाद सिंह (DW-4) के निर्देश और कथन के अनुसार लिखा गया था और बिक्री मूल्य वादी के पिता राम किशुन साव द्वारा भुगतान किया गया था। अभिलेखों से और विशेष रूप से Ex.P-1 – बिक्री विलेख दिनांक 7-12-1955 से यह प्रकट होता है कि खरीद के समय वादी नाबालिग थे और इसलिए उनके पिता राम किशुन साव द्वारा अभिभावक के रूप में खरीदी गई थी, लेकिन तथ्य यह है कि यह वादी द्वारा उनके अभिभावक और पिता राम किशुन साव के माध्यम से खरीदी गई थी और Ex.P-1 बिक्री विलेख के अनुसार स्वत्व (Title) वादी का होगा। उन्होंने बिक्री विलेख के निष्पादन की तिथि से भूमि का कब्जा प्राप्त किया और इसके बाद 1967-68 तक कब्जे में रहे।

17. मूल प्रतिवादियों ने लिखित बयान प्रस्तुत करते समय केवल यह दलील दी कि उनका कब्जा 1955 से है और इस प्रकार उन्होंने प्रतिकूल कब्जे के माध्यम से अपने स्वत्व (Title) को प्रमाणित कर लिया है। 9-5-1974 को प्रस्तुत की गई दलील में, पहली बार प्रतिवादियों ने यह तर्क दिया कि संपत्ति राम किशुन साव की बेनामी संपत्ति थी और चूंकि वे कब्जे में थे, इसलिए राम किशुन साव ने 16-6-1961 को उनके पक्ष में विक्रय अनुबंध (Ex.D-1) निष्पादित किया ताकि विवाद का अंत हो सके और इस प्रकार, वादी कभी भी वादग्रस्त भूमि का स्वामी नहीं था। प्रतिवादियों ने यह भी तर्क दिया कि वादी के पिता ने हिंदू अविभाजित परिवार के कर्ता के रूप में 16-6-1961 को उनके पक्ष में एक विक्रय अनुबंध निष्पादित किया, इसलिए वे अनुबंध के आंशिक प्रदर्शन में कब्जे में हैं, जिसे परीक्षण न्यायालय ने कूटरचित माना,



लेकिन प्रथम अपीलीय न्यायालय ने वैध दस्तावेज माना और इस प्रकार, परीक्षण न्यायालय के डिक्री को पलटते हुए यह निर्णय दिया कि प्रतिवादियों ने प्रतिकूल कब्जे के माध्यम से अपना स्वत्व (Title) प्रमाणित कर लिया है।

18. इस चरण में, परिसीमा अधिनियम, 1963 की धारा 27 के आधार पर विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता की दलील पर ध्यान देना उपयुक्त होगा कि एक बार जब संपत्ति पर कब्जा पुनः प्राप्त करने का अधिकार समाप्त हो जाता है, तो यह पुनः प्रवेश या स्वत्व की बाद की स्वीकारोक्ति द्वारा दोबारा प्राप्त नहीं किया जा सकता। विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने सर्वोच्च न्यायालय के माननीय न्यायाधीशों द्वारा रवींद्र कौर ग्रेवाल (supra) मामले में दिए गए निर्णय के पैराग्राफ 28 और 53 का संदर्भ दिया, जिनमें निम्नलिखित कहा गया है:

"28. हैल्सबरी के इंग्लैंड के विधि शास्त्र में, परिसीमा अवधि समाप्त होने के प्रभाव से स्वत्व के विलुप्त होने पर भी चर्चा की गई है, और एक बार कब्जा पुनः प्राप्त करने का अधिकार खो जाने के बाद, इसे किसी भी पुनः प्रवेश या स्वत्व की बाद की स्वीकारोक्ति द्वारा दोबारा प्राप्त नहीं किया जा सकता। पैराग्राफ 783 इस प्रकार है:"

783. स्वामित्व का लोप-जिन व्यक्तियों को भूमि (जिसमें पुनः अधिकार प्राप्त करने की कार्रवाई भी सम्मिलित है) या किसी पद के अधिकार को प्रवर्तित करने के लिए दावा करने की अवधि परिसीमा अधिनियम, 1939 द्वारा निर्धारित की गई है, उस अवधि की समाप्ति पर, उन व्यक्तियों का भूमि या पद पर अधिकार समाप्त हो जाता है। यह स्थिर भूमि और ट्रस्ट में रखी भूमि से संबंधित विशेष प्रावधानों तथा पंजीकृत भूमि के स्वामी को उसके विरुद्ध अधिकार प्राप्त करने वाले व्यक्ति के लिए ट्रस्टी घोषित करने के प्रावधानों के अधीन है। जो अधिकार समाप्त हो गया है, वह न तो पुनः प्रवेश द्वारा, न ही बाद में किसी भुगतान या अधिकार की स्वीकृति द्वारा पुनः प्राप्त किया जा सकता है।

जब किसी किराया-भार को वसूलने का अधिकार समाप्त हो जाता है, तो वह भी लुप्त हो जाता है।

53. प्रतिकूल कब्जे का कानून केवल प्रतिवादी को ही प्रतिकूल कब्जे के माध्यम से स्वत्व प्राप्त करने के लिए योग्य नहीं बनाता, बल्कि यह उस व्यक्ति द्वारा भी प्रमाणित किया जा सकता है जो वाद प्रस्तुत कर रहा है। यह केवल स्वामी के अधिकार को पुनः प्राप्त करने के अधिकार



को सीमित करता है, जब तक कि उसकी अधिकारों की समाप्ति के लिए निर्धारित सीमित अवधि समाप्त नहीं हो जाती। एक बार जब यह अधिकार समाप्त हो जाता है, तो दूसरा व्यक्ति अधिप्राप्ति अधिकार प्राप्त कर लेता है, जिसे स्वामी द्वारा पुनः प्रवेश या उसके अधिकारों की बाद की स्वीकृति से पराजित नहीं किया जा सकता। ऐसे मामले में, वह व्यक्ति वाद प्रस्तुत कर सकता है, जिसके अधिकार को समाप्त करने का प्रयास किया जा रहा है।"

19. इस न्यायालय ने भी रेशम लाल उर्फ बट्टी प्रसाद बनाम गोसाई राम एवं अन्य, 2007(3) C.G.L.J. 231 के मामले में, परिसीमा अधिनियम, 1963 की धारा 27 को अनुच्छेद 65 के साथ पढ़ते हुए स्पष्ट रूप से यह निर्णय दिया है कि यदि भूमि के स्वामी द्वारा कब्जा वापस पाने के लिए 12 वर्षों से अधिक समय तक कोई कार्रवाई नहीं की जाती है, तो उसकी भूमि पर स्वामित्व समाप्त हो जाता है।
20. प्रथम अपीलीय न्यायालय द्वारा यह मानते हुए कि प्रतिवादियों का वाद विवादित भूमि पर कब्जा 07-12-1955 से था और वादी के पिता द्वारा प्रतिवादियों के पक्ष में 16-06-1961 को बिक्री अनुबंध किया गया, तो वादी के पिता द्वारा किए गए इस अनुबंध की तिथि तक प्रतिवादियों का कब्जा 12 वर्ष से कम समय का था। चूंकि प्रतिवादियों का कब्जा 12 वर्षों की न्यूनतम अवधि तक नहीं पहुंचा था, इसलिए प्रतिकूल कब्जे का दावा बनाए रखने के लिए आवश्यक अवधि पूरी नहीं होती। अतः वादी परिसीमा अधिनियम, 1963 की धारा 27 का लाभ प्राप्त करने का अधिकारी नहीं है। इसी प्रकार, सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दिए गए रविंदर कौर ग्रेवाल (supra) के निर्णय के अनुच्छेद 28 और 53 के आधार पर दी गई दलील भी वादी के पक्ष में उपलब्ध नहीं है।
21. अब प्रश्न यह है कि क्या प्रतिवादियों ने वाद विवादित भूमि पर प्रतिकूल कब्जे के माध्यम से अपने स्वामित्व को प्रमाणित करने का मामला प्रस्तुत किया है?
22. प्रतिकूल कब्जे की तीन मूलभूत आवश्यकताएँ होती हैं – "Nec vi, nec clam, nec precario", अर्थात् (1) निरंतरता में पर्याप्तता, (2) सार्वजनिक रूप से पर्याप्तता, और (3) प्रतिस्पर्धी के प्रति प्रतिकूलता। प्रतिकूल कब्जे के आधार पर डिक्री प्राप्त करने के लिए उपर्युक्त आवश्यकताओं को स्पष्ट रूप से अभिव्यक्त किया जाना चाहिए और सुस्पष्ट रूप से प्रमाणित किया जाना आवश्यक है।
23. सर्वोच्च न्यायालय ने "Karnataka Board of Wakf vs Union of India & Ors" (2004) 10 SCC 779 के मामले में प्रतिकूल कब्जे का दावा करने वाले व्यक्ति को प्रमाणित करने के लिए कुछ विधिक



सिद्धांत निर्धारित किए। इसमें यह कहा गया कि जो व्यक्ति प्रतिकूल कब्जे का दावा करता है, उसे निम्नलिखित तथ्यों को स्पष्ट रूप से प्रदर्शित करना होगा:

- (क) उसने किस तिथि को कब्जा किया,
- (ख) उसके कब्जे की प्रकृति क्या थी,
- (ग) क्या कब्जे का तथ्य अन्य पक्षकार को ज्ञात था,
- (घ) उसका कब्जा कितने समय तक जारी रहा, और
- (ङ) क्या उसका कब्जा खुला और अबाधित था।

इसके अतिरिक्त, माननीय न्यायालय ने यह भी कहा कि प्रतिकूल कब्जे का दावा करने वाले व्यक्ति को कोई नैतिक छूट प्राप्त नहीं होती। चूँकि वह वास्तविक स्वामी के अधिकारों को निष्प्रभावी करने का प्रयास कर रहा होता है, इसलिए उसे अपने प्रतिकूल कब्जे को स्थापित करने के लिए सभी आवश्यक तथ्यों को स्पष्ट रूप से अभिव्यक्त और प्रमाणित करना अनिवार्य है।

24. कर्नाटक बोर्ड ऑफ वक्फ (supra) में स्थापित विधि सिद्धांत को रवींद्र कौर ग्रेवाल (supra) में स्वीकृति के साथ अपनाया गया है। उनके सम्माननीय न्यायमूर्तियों ने अपनी रिपोर्ट के पैराग्राफ 60, 61 और 62 में यह सिद्धांत स्पष्ट रूप से स्थापित किया है कि प्रतिकूल कब्जे (adverse possession) के लिए तीन क्लासिक आवश्यकताओं का एक साथ मौजूद होना अनिवार्य है, अर्थात् –Nec vi – निरंतरता में पर्याप्त (adequate in continuity), Nec clam – सार्वजनिक रूप से पर्याप्त (adequate in publicity), Nec precario – स्वामित्व को चुनौती देते हुए प्रतिकूल (adverse to a competitor, in denial of title and his knowledge)

उन्होंने इस संदर्भ में निम्नलिखित टिप्पणियां कीं –

- 60. प्रतिकूल कब्जे के लिए उपरोक्त तीनों शर्तों का एक साथ पूरा होना आवश्यक है। यह कब्जा स्पष्ट, प्रमाणित और शांतिपूर्ण होना चाहिए, ताकि यदि स्वामी सावधानीपूर्वक ध्यान न दे, तो उसे तथ्यात्मक जानकारी प्राप्त करने के लिए उत्तरदायी ठहराया जा सके। यदि स्वामी उचित परिश्रम करता तो उसे इस कब्जे की जानकारी हो जाती। प्रतिकूल कब्जा ऐसे स्वामित्व के आधार पर स्थापित नहीं किया जा सकता, जिसे याचिका में स्पष्ट रूप से प्रस्तुत ही नहीं किया



गया हो। दावे के लिए Animus Possidendi (स्वामित्व की मानसिकता) का होना आवश्यक है, जो शत्रुतापूर्ण स्वामित्व के रंग में हो। केवल दीर्घकालिक अतिक्रमण को प्रतिकूल कब्जा नहीं माना जा सकता। अतिक्रमणकर्ता का कब्जा मूलतः स्वामी के पक्ष में माना जाता है, और कभी-कभी अस्थायी उपयोग प्रतिकूल कब्जे के रूप में नहीं गिना जाता। संपत्ति का वास्तविक उपयोगकर्ता उसकी देखभाल करता है, उसकी रक्षा करता है, और यदि वह कृषि भूमि है, तो यह माना जाता है कि जो व्यक्ति परिश्रम करके भूमि को उपजाऊ बनाता है, वही उसका स्वामी होना चाहिए। विभिन्न राज्यों में विधायिका ने इसी आधार पर स्वामित्व के अधिकार प्रदान किए हैं।

61. प्रतिकूल कब्जा उत्तराधिकार योग्य होता है और इसमें विभिन्न व्यक्तियों का अधिकार स्थानांतरित किया जा सकता है, क्योंकि यह एक हस्तांतरणीय अधिकार है। यह एक परिपूर्ण अधिकार दान करता है, जिसे केवल अनुच्छेद 65 में निर्दिष्ट प्रक्रियाओं के अनुसार ही समाप्त किया जा सकता है। प्रतिकूल कब्जे की उत्तराधिकारिता कुछ शर्तों पर निर्भर करती है – यह उत्तराधिकारी, क्रेता, उत्तराधिकारी या असाइन के माध्यम से जारी रह सकता है, बशर्ते कि कब्जा लगातार बना रहे। यह आवश्यक है कि संपत्ति एक ही व्यक्ति से जुड़े अधिकार के अंतर्गत हो। यदि दो अलग-अलग अतिक्रमणकर्ता हैं, तो वे अपनी कब्जे की अवधि को जोड़कर प्रतिकूल कब्जे का दावा नहीं कर सकते।

62. हम यह मानते हैं कि कोई भी व्यक्ति, जो किसी संपत्ति के कब्जे में है, उसे किसी अन्य व्यक्ति द्वारा विधि-सम्मत प्रक्रिया के बिना नहीं हटाया जा सकता। एक बार यदि 12 वर्षों की अवधि पूरी हो जाती है, तो मूल स्वामी का अधिकार समाप्त हो जाता है, और प्रतिकूल कब्जाधारी को वैध अधिकार, स्वामित्व और हित प्राप्त हो जाता है, ठीक उसी प्रकार जैसे स्वामी को अधिकार प्राप्त था। इसका परिणाम यह होता है कि – प्रतिकूल कब्जाधारी न केवल प्रतिरक्षा के रूप में, बल्कि आक्रामक रूप में भी इस अधिकार का उपयोग कर सकता है। यदि उसे कब्जे से बाहर निकाला जाता है, तो वह पुनः कब्जे की बहाली के लिए वाद प्रस्तुत कर सकता है। यदि कोई अन्य व्यक्ति उसे अवैध रूप से बेदखल करता है, तो वह प्रतिकूल कब्जे के अधिकार का दावा करके उसे हटाने का वाद कर सकता है। प्रतिकूल कब्जे के कारण मूल स्वामी के अधिकार समाप्त हो जाने के बाद, यदि स्वामी स्वयं उसे हटाने की कोशिश करता है, तो भी प्रतिकूल कब्जाधारी उसे कानूनी रूप से हटाने के लिए वाद कर सकता है। इसी प्रकार, यदि



कोई अन्य व्यक्ति कब्जे से बेदखल करता है, तो उसे भी केवल तब तक कब्जे का अधिकार मिलेगा जब तक कि उसने स्वयं प्रतिकूल कब्जे की अवधि पूरी कर ली हो। इसके अतिरिक्त, अन्य कानूनी अनुच्छेदों के अंतर्गत, यदि किसी व्यक्ति के अधिकारों का उल्लंघन हुआ है और उसने प्रतिकूल कब्जे के माध्यम से स्वामित्व प्राप्त कर लिया है, तो वह कानूनी रूप से वाद प्रस्तुत कर सकता है और अपने अधिकारों की रक्षा कर सकता है।

25.1) राम जन्मभूमि मंदिर मामले में M. Siddiq (Dead) Through Legal Representatives (Ram Janmabhumi Temple Case) v. Mahant Suresh Das and others (2020) 1 SCC 1 में सुप्रीम कोर्ट (संविधान पीठ) ने स्पष्ट रूप से यह माना कि प्रतिकूल कब्जे का दावा करना, उस व्यक्ति की स्वामित्व की स्वीकृति के समान है जिसके खिलाफ यह दावा किया जा रहा है। कोर्ट ने निम्नलिखित टिप्पणियाँ कीं:

"1142. प्रतिकूल कब्जे का दावा इस स्वीकार्यता पर आधारित होता है कि संपत्ति का स्वामित्व वास्तव में उस व्यक्ति के पास है जिसके विरुद्ध प्रतिकूल कब्जे का दावा किया जा रहा है। प्रतिकूल कब्जा इस अर्थ में प्रतिकूल है कि यह उस व्यक्ति के स्वीकार्य स्वामित्व के विरुद्ध है। अतः, वाद संख्या 4 के वादियों को यह ज्ञात होना चाहिए कि हिंदुओं या मंदिर के विरुद्ध प्रतिकूल कब्जे का कोई भी दावा, उनके स्वामित्व की स्वीकृति के समान होगा। डॉ. धवन ने तर्क दिया कि यह दलील एक गौण या वैकल्पिक दलील है, जिस पर वादियों को खड़ा होने की आवश्यकता नहीं है यदि उनके स्वत्व का मुख्य दावा साक्ष्यों के आधार पर प्रमाणित हो जाता है। इसलिए, यह मूल्यांकन करना आवश्यक हो जाता है कि क्या प्रतिकूल कब्जे का दावा साबित हुआ है।

1143. जो व्यक्ति प्रतिकूल कब्जे का दावा करता है, उसे यह साबित करना होगा कि उसका कब्जा शांतिपूर्ण, खुला और सतत रहा है तथा यह "Nec vi, nec clam, nec precario" की आवश्यकताओं को पूरा करता है। प्रतिकूल कब्जे के दावे को प्रमाणित करने के लिए कब्जे की प्रकृति में निरंतरता होनी चाहिए और यह सार्वजनिक रूप से ज्ञात होना चाहिए ताकि वास्तविक मालिक को इसका पता चल सके। इन आवश्यकताओं को पहले स्पष्ट रूप से दलीलों (Pleadings) में स्थापित किया जाना चाहिए और फिर पर्याप्त साक्ष्य द्वारा प्रमाणित किया जाना चाहिए। यह एक स्थापित नियम है कि साक्ष्य केवल उन्हीं मामलों के संबंध में



प्रस्तुत किए जा सकते हैं जो दीवानी वाद (Civil Suit) में पहले से दलीलों के रूप में उल्लिखित हों। यदि कोई आवश्यक दलीलें नहीं दी गई हैं, तो मात्र साक्ष्य से वाद को मजबूत नहीं किया जा सकता। ..."

स्पष्ट एवं उचित दलीलों की आवश्यकता पर न्यायालय की टिप्पणी

24.2) उनके लॉर्डशिप्स ने Karnataka Board of Wakf (supra) मामले में सुप्रीम कोर्ट के फैसले पर भरोसा करते हुए कहा कि प्रतिकूल कब्जे के सभी तत्वों को स्पष्ट रूप से दलीलों में प्रस्तुत करना आवश्यक है और साक्ष्यों द्वारा इसे साबित करना जरूरी है। बिना दलीलों के केवल साक्ष्य से मामला स्थापित नहीं किया जा सकता, और केवल दलीलों से बिना साक्ष्यों के दावा प्रमाणित नहीं होगा।

24.3) उनके लॉर्डशिप्स ने प्रतिकूल कब्जे के स्पष्ट दावे की आवश्यकता पर बल दिया और कहा:

"1154. 2015 के एक फैसले में, माननीय न्यायमूर्ति अब्दुल नज़ीर (तत्कालीन कर्नाटक हाई कोर्ट के एकल पीठ न्यायाधीश) ने प्रतिकूल कब्जे के दावे के लिए आवश्यक शर्तों को इस प्रकार स्पष्ट किया:

"प्रतिकूल कब्जे की अवधारणा एक शत्रुतापूर्ण कब्जे को दर्शाती है, अर्थात ऐसा कब्जा जो स्पष्ट या निहित रूप से सच्चे मालिक के स्वामित्व को अस्वीकार करता हो। प्रतिकूल कब्जे के लिए यह आवश्यक है कि कब्जा करने वाला व्यक्ति दूसरों के अधिकारों को स्वीकार न करे बल्कि उन्हें नकारे।

कब्जा होना मात्र भूमि के उपयोग को प्रदर्शित नहीं करता, बल्कि इसमें भूमि पर स्वामित्व स्थापित करने की मानसिकता भी होनी चाहिए (Animus Possidendi)। किसी भूमि पर केवल कब्जा होने से अधिकार नहीं बनता, बल्कि यह कब्जा निरंतर, सार्वजनिक और वास्तविक होना चाहिए ताकि यह प्रमाणित हो सके कि यह वास्तविक स्वामी के अधिकार के खिलाफ प्रतिकूल रूप से किया गया है।

अगर कोई व्यक्ति यह दावा करता है कि उसने प्रतिकूल कब्जे के आधार पर भूमि का स्वामित्व प्राप्त कर लिया है, तो उसे यह साबित करना होगा कि उसका कब्जा शांतिपूर्वक, खुले रूप से और वास्तविक स्वामी के अधिकार के प्रतिकूल रहा है।"



1155. Ravinder Kaur Grewal v. Manjit Kaur (2019) 8 SCC 729 : (2019) 4 SCC (Civ) 453 के मामले में, सुप्रीम कोर्ट की तीन-न्यायाधीशों की पीठ (जिसमें जस्टिस अब्दुल नज़ीर भी शामिल थे) ने प्रतिकूल कब्जे के सिद्धांत को और विकसित करते हुए यह निर्णय दिया कि जो व्यक्ति प्रतिकूल कब्जे द्वारा अपना स्वामित्व प्रमाणित कर चुका है, वह यदि बाद में बेदखल कर दिया जाए तो वह पुनः कब्जा बहाल करने के लिए वाद प्रस्तुत कर सकता है। इस दृष्टिकोण से, प्रतिकूल कब्जा केवल ढाल ही नहीं, बल्कि तलवार भी हो सकता है।
1156. इस मामले में वादी एक स्पष्ट रुख अपनाने में असमर्थ रहे क्योंकि वे जानते थे कि यदि वे प्रतिकूल कब्जे की दलील प्रस्तुत करते हैं, तो उन्हें यह भी स्वीकार करना पड़ेगा कि जिनके विरुद्ध यह दावा किया जा रहा है, वे ही वास्तविक स्वामी हैं। इसके अतिरिक्त, वादी यह भी साबित नहीं कर सकते थे कि उन्होंने पूरे विवादित क्षेत्र पर शांतिपूर्ण, खुले और सतत रूप से कब्जा बनाए रखा था।"

26. उपरोक्त सुप्रीम कोर्ट के निर्णयों से उत्पन्न विधि सिद्धांतों के प्रकाश में वर्तमान मामले के तथ्यों पर पुनः विचार करते हुए, प्रतिवादियों का यह दावा है कि वे वादी के पिता से बिक्री अनुबंध के आधार पर संपत्ति के कब्जे में आए, जिसे निचली अदालत ने स्वीकार नहीं किया, लेकिन प्रथम अपील न्यायालय ने दिनांक 16-6-1961 (प्रदर्श D-1) को एक वैध दस्तावेज के रूप में स्वीकार कर लिया है। प्रतिवादियों ने इस द्वितीय अपील में उक्त दस्तावेज को अवैध प्रमाणित करने के लिए कोई प्रतिपरीक्षण अपील (क्रॉस-अपील) या प्रतिपरीक्षण आपत्ति (क्रॉस-ऑब्जेक्शन) प्रस्तुत नहीं की। अतः, प्रदर्श D-1 दस्तावेज, जो वादी के पिता द्वारा प्रतिवादियों के पक्ष में निष्पादित किया गया था, की वैधता अंतिम रूप से स्थापित हो चुकी है। इसलिए, अब प्रश्न यह उठता है कि प्रदर्श D-1 – बिक्री अनुबंध के आधार पर प्रतिवादियों द्वारा धारित कब्जे की प्रकृति क्या होगी? इस चरण में, यह आवश्यक होगा कि दिनांक 16-6-1961 का प्रदर्शनी D-1 दस्तावेज देखा जाए, जिसमें निम्नलिखित उल्लेख है:

“मैं वली रामकिशुन राम आत्मज जय गोविन्द साव जाति रौनियार साकिन पिंड्रा थाना बलरामपुर तहसील पाल जिला सरगुजा का हूं। मैं अपना लड़का नाबालिक भीखम साव आत्मज राम किशुन साव जाति रौनियार साकिन पिंड्रा थाना बलरामपुर तहसील पाल जिला सरगुजा के जमीन जो मौजा बलरामपुर के खाता नम्बर 92 का 8.89 (आठ एकड़ नवासी



डिसिमिल) है। जिसका खसरा नम्बर, रकबा नम्बर पिठ पर दर्शाया गया है, जिसे श्री रंगनाथ सिंह वल्द राधाकृष्ण सिंह साकिन सवनी के साथ मुवलिक 5000 (पांच हजार रूपया) सिर्फ में बेचने के लिये तय किया जिसमें से मुवलिक 1400 (चौदह सौ रूपया) सिर्फ पाकर इकरार नामा लिख रहा हूं कि वाद वारिस बची हुयी पूरी रकम लेकर अदालत रामानुजगंज में रजिस्ट्री कर दूंगा। जो कि क्रेता का पहले से ही कब्जा है। इसलिये दो गवाहों के सामने अपने होश हवाश के साथ इकरारनामा लिख दिया कि समय पर काम आवे।”

27. बिक्री अनुबंध (Ex.D-1) का सावधानीपूर्वक अवलोकन करने पर प्रतीत होता है कि वादी के पिता ने, वादी (भिखम साव) के संरक्षक के रूप में, प्रतिवादी संख्या 1 के पक्ष में विवादित भूमि को ₹5,000/- के विचारण मूल्य पर बेचने के लिए सहमति व्यक्त की थी। प्रतिवादी संख्या 1, जो पहले से ही विवादित भूमि के कब्जे में था, उसे Ex.D-1 बिक्री अनुबंध दिनांक 16-06-1961 के आधार पर आगे भी कब्जे में बने रहने की अनुमति दी गई थी।

28. इस चरण में, संपत्ति अंतरण अधिनियम, 1882 की धारा 53A का उल्लेख करना उपयुक्त होगा, जो निम्नानुसार है-

"53A. आंशिक निष्पादन (Part Performance): यदि कोई व्यक्ति किसी अचल संपत्ति को विचारण मूल्य के लिए हस्तांतरित करने का अनुबंध करता है और- ,वह अनुबंध लिखित रूप में हो, जिसे उसने स्वयं या उसके प्रतिनिधि ने हस्ताक्षरित किया हो, और जिससे अंतरण की आवश्यक शर्तों को यथोचित निश्चितता के साथ जाना जा सके, और पार्श्व हस्तांतरित (transferee) ने अनुबंध के आंशिक निष्पादन के रूप में संपत्ति या उसके किसी भाग का कब्जा ले लिया हो, अथवा यदि वह पहले से ही कब्जे में था, तो उसने अनुबंध के आंशिक निष्पादन के रूप में अपना कब्जा बनाए रखा हो तथा अनुबंध को आगे बढ़ाने के लिए कोई कार्य किया हो, और यदि पार्श्व हस्तांतरित ने अनुबंध की अपनी शर्तों को पूरा किया हो या पूरा करने के लिए तैयार हो, तो, भले ही यदि कोई अंतरण दस्तावेज (Instrument of Transfer) मौजूद हो, किंतु वर्तमान समय में लागू कानून के अनुसार उस अंतरण को पूरी तरह विधिक रूप में संपन्न नहीं किया गया हो, तब भी अंतरणकर्ता (Transferor) या उसके उत्तराधिकारी पार्श्व हस्तांतरित तथा उसके उत्तराधिकारियों के विरुद्ध उस संपत्ति पर कोई अधिकार लागू नहीं कर सकते, सिवाय उन अधिकारों के जो अनुबंध में स्पष्ट रूप से निर्दिष्ट हैं।



परंतु, इस धारा का प्रभाव किसी ऐसे विचारण मूल्य वाले हस्तांतरित व्यक्ति (transferee) के अधिकारों पर नहीं पड़ेगा, जिसे अनुबंध या उसके आंशिक निष्पादन की कोई जानकारी न हो।

29. संपत्ति अंतरण अधिनियम, 1882 की धारा 53A के अंतर्गत निम्नलिखित आवश्यक शर्तें हैं:

1. एक अनुबंध होना चाहिए जिसके द्वारा किसी अचल संपत्ति का विचारणीय मूल्य (प्रतिफल) पर अंतरण किया जाना हो।
2. अनुबंध लिखित रूप में होना चाहिए और स्थानांतरक (ट्रांसफरर) या उसके किसी अधिकृत प्रतिनिधि द्वारा हस्ताक्षरित होना चाहिए।
3. लेखन इस प्रकार का होना चाहिए जिससे अंतरण के लिए आवश्यक शर्तों का निर्धारण किया जा सके।
4. स्थानांतरितकर्ता (ट्रांसफरी) को अनुबंध के आंशिक निष्पादन (परफॉर्मेंस) के रूप में संपत्ति या उसके किसी भाग का कब्जा लेना चाहिए।
5. स्थानांतरितकर्ता को अनुबंध को आगे बढ़ाने के लिए कुछ कार्य करना चाहिए।
6. स्थानांतरितकर्ता को अनुबंध के अनुसार अपने दायित्वों का पालन करना चाहिए या पालन करने के लिए तत्पर होना चाहिए।

30. संपत्ति अंतरण अधिनियम, 1882 की धारा 53A के तहत प्रस्तावित हस्तांतरित व्यक्ति को प्रदान किया गया संरक्षण केवल अंतरणकर्ता के विरुद्ध एक ढाल है। यह अंतरणकर्ता को उस प्रस्तावित हस्तांतरित व्यक्ति के कब्जे को बाधित करने से रोकता है, जिसे इस प्रकार के एक समझौते के अनुपालन में कब्जे में रखा गया हो। इसका प्रस्तावित हस्तांतरितकर्ता की स्वामित्व स्थिति से कोई संबंध नहीं है, क्योंकि वह संपत्ति का पूर्ण स्वामी बना रहता है जब तक कि इसे कानूनी रूप से हस्तांतरित कर पंजीकृत विक्रय विलेख के माध्यम से हस्तांतरित व्यक्ति के पक्ष में निष्पादित नहीं कर दिया जाता। प्रस्तावित विक्रेता के विरुद्ध कब्जे की रक्षा करने का यह अधिकार किसी तीसरे पक्ष के विरुद्ध लागू नहीं किया जा सकता। (देखें **Rambhau Namdeo Gajre v. Narayan Bapuji Dhotra (Dead) Through LRs. (2004) 8 SCC 614.**)

31. संपत्ति अंतरण अधिनियम, 1882 की धारा 53A के बल पर, जहाँ एक हस्तांतरितकर्ता पहले से ही कब्जे में है, यदि वह उक्त बिक्री समझौते के अनुसरण में कब्जे में बना रहता है, तो उसे समझौते के



अनुसरण में कब्जे में माना जाएगा, और बिक्री समझौते के अनुसरण में कब्जे का स्वरूप अब विवाद में नहीं है, यह हमेशा अनुमत्य (permissive) प्रकृति का होता है।

32. सुप्रीम कोर्ट ने **Achal Reddy v. Ramakrishna Reddiar and others (1990) 4 SCC 706** के मामले में, परिसीमा अधिनियम, 1963 के अनुच्छेद 64 और 65 से संबंधित मुद्दे पर विचार करते हुए, निष्पादनीय बिक्री अनुबंध के मामले में यह निर्णय दिया कि: जहाँ क्रेता बिक्री समझौते के तहत संपत्ति का कब्जा प्राप्त करता है, जबकि पक्षकार भविष्य में पंजीकृत बिक्री विलेख निष्पादित करने की योजना बना रहे होते हैं, ऐसी स्थिति में, क्रेता विक्रेता के स्वामित्व को स्वीकार करता है और इस प्रकार विक्रेता के खिलाफ अपने कब्जे को प्रतिकूल (एडवर्स) दावा नहीं कर सकता। रिपोर्ट के Para 9 और 10 में निम्नलिखित लिखा गया है:

9. इसमें कोई विवाद नहीं है कि जब वादी (Plaintiff) यह दावा करता है कि वह संपत्ति के कब्जे में था और उसे बेदखल कर दिया गया, तो उसे यह साबित करना होगा कि वाद प्रस्तुत करने से पूर्व 12 वर्षों के भीतर वह संपत्ति के वास्तविक कब्जे में था। प्रथम अपीलीय न्यायालय और द्वितीय अपीलीय न्यायालय, दोनों ने यह माना कि वादी अपने कब्जे को साबित करने में विफल रहा है, और इसलिए वह सफल नहीं हो सकता। हालांकि, यह पाया गया कि वादी को स्वत्व (Title) प्राप्त था, भले ही उसके खिलाफ विशिष्ट निष्पादन (Specific Performance) का एक डिक्री पारित हो चुका था, लेकिन जब तक वह डिक्री निष्पादित नहीं हुई थी, तब तक उसका स्वत्व वैध बना रहा। उच्च न्यायालय में अपीलकर्ता ने इस निष्कर्ष को चुनौती नहीं दी, इसलिए अब वह यह तर्क नहीं दे सकता कि Ex.A-1 बिक्री विलेख (Sale Deed) बिना किसी मूल्य (Consideration) के निष्पादित किया गया था और वादी को वैध स्वत्व प्रदान नहीं करता था। उच्च न्यायालय में एकमात्र मुद्दा यह था कि क्या वादी का स्वत्व (Title) अभी भी वैध और प्रभावी (Subsisting Title) था। अब हमें यह तय करना है कि 10 जुलाई 1946 से 17 जुलाई 1947 के बीच वरदा रेड्डी (Varada Reddi) का कब्जा प्रतिकूल (Adverse) था या केवल अनुमत (Permissive) था। यदि किसी बिक्री समझौते (Agreement of Sale) के तहत कोई व्यक्ति संपत्ति के कब्जे में आता है, तो वह विक्रेता (Vendor) के स्वत्व को स्वीकार करता है, भले ही वह समझौता अवैध ही क्यों न हो। इस प्रकार, विक्रेता के स्वत्व को स्वीकार करना प्रतिकूल कब्जे (Adverse Possession) की धारणा को समाप्त कर देता है। कानून का स्थापित सिद्धांत यह है कि यदि कोई व्यक्ति किसी वैध स्वत्व के अंतर्गत कब्जे में है और वह उस स्वत्व के



आधार पर स्वामी (Owner) के अधिकार को स्वीकार करता है, तो उसकी संपत्ति पर पकड़ (Possession) कानूनन प्रतिकूल नहीं मानी जाएगी, भले ही वह किसी अन्य स्वत्व के तहत दावा कर रहा हो। यदि कोई क्रेता एक निष्पादित अनुबंध के तहत कब्जा प्राप्त करता है, तो वह यह दावा नहीं कर सकता कि उसका कब्जा विक्रेता के विरुद्ध प्रतिकूल था। प्रतिकूल कब्जे की धारणा में यह आवश्यक होता है कि कब्जा अवैध रूप से शुरू हुआ हो और किसी वैध अधिकार के विरुद्ध जारी रखा गया हो। लेकिन जब कब्जे की शुरुआत और उसका जारी रहना वैध और अनुबंध के तहत अनुमत हो, तो वह कब्जा प्रतिकूल नहीं माना जाएगा।

10. जब एक निष्पादित बिक्री अनुबंध के तहत क्रेता को संपत्ति का कब्जा सौंपा जाता है, और दोनों पक्ष बाद में विधिवत पंजीकृत विक्रय विलेख निष्पादित करने का इरादा रखते हैं, तो क्रेता का मनोभाव यह होता है कि वह विक्रेता की संपत्ति में है और स्वत्व को विधिवत विक्रय विलेख द्वारा प्राप्त करना शेष है। ऐसे मामलों में, क्रेता का कब्जा अनुमत होता है और विक्रेता के स्वत्व को स्वीकार करता है। लेकिन स्थिति तब अलग होती है जब किसी मौखिक अंतरण या अपंजीकृत दस्तावेज़ के आधार पर, स्वामी संपत्ति का अंतरण इस स्पष्ट भावना के साथ करता है कि वह अब उस संपत्ति पर कोई अधिकार नहीं रखेगा। ऐसे मामलों में, स्वामी न केवल कानूनी रूप से, बल्कि मानसिक रूप से भी संपत्ति से अपने सभी अधिकार समाप्त कर लेता है। दूसरी ओर, अधिग्रहणकर्ता इस मानसिकता से संपत्ति का स्वामित्व ग्रहण करता है कि वह अब उसका पूर्ण स्वामी है, और यह स्वामित्व किसी अन्य व्यक्ति के अधिकार को मान्यता दिए बिना किया गया है। इस तरह का अंतरण केवल तब मान्य होता है जब स्वामी के अपने अधिकारों से पूरी तरह मुक्त होने का स्पष्ट संकेत मौजूद हो। इसके विपरीत, यदि कोई निष्पादित अनुबंध है, तो विक्रय विलेख के पंजीकरण की तिथि तक, क्रेता का कब्जा अनुमत और व्युत्पन्न माना जाएगा, और विधि अनुसार यह स्वामी के पक्ष में ही माना जाएगा। इसलिए, **Annamalai v. Muthiah ILR (1965) 1 Mad 254: 78 Mad LW 172** में दिए गए निर्णय की वैधता पर संदेह करने का कोई कारण नहीं है।

33. मोहन लाल (supra) मामले में, माननीय सुप्रीम कोर्ट के न्यायमूर्तियों ने यह निर्णय दिया है कि यदि कोई व्यक्ति किसी अनुबंध के तहत किसी संपत्ति के कब्जे में आता है, तो उसका कब्जा प्रतिकूल नहीं हो



सकता और उसे प्रतिकूल कब्जे की दलील देने का अधिकार नहीं होता। निर्णय की रिपोर्ट के पैराग्राफ 4 में यह कहा गया है:

"4. जहाँ तक पहली दलील का प्रश्न है, वह दूसरी दलील के विपरीत है। जब कोई व्यक्ति किसी अनुबंध के तहत कब्जे में आया हो, तो उसे अनुबंध के तहत अपने अधिकार को अस्वीकार करना होगा और स्वतंत्र, शत्रुतापूर्ण तथा प्रतिकूल कब्जे की दलील देनी होगी। साथ ही, उसे यह साबित करना होगा कि अंतरणकर्ता (ट्रांसफरर) या उसके उत्तराधिकारी को उसके इस अवैध कब्जे की जानकारी थी और उन्होंने पूरे 12 वर्षों की अवधि तक इस पर आपत्ति नहीं की, अर्थात् उसका कब्जा 'nec vi, nec clam, nec precario' (न बलपूर्वक, न छिपकर, न अनुरोध पर) प्रमाणित हो। चूंकि अपीलकर्ता का दावा धारा 53-A पर आधारित है, इसलिए यह स्पष्ट रूप से इंगित करता है कि वह यह स्वीकार करता है कि उसने विधिपूर्वक अनुबंध के तहत भूमि का कब्जा लिया और मुकदमे की तिथि तक उसी स्थिति में बना रहा। अतः, अपीलकर्ता के लिए प्रतिकूल कब्जे की दलील उपलब्ध नहीं है।"

34. सर्वोच्च न्यायालय द्वारा अचल रेड्डी (supra) और मोहनलाल (supra) में दिए गए निर्णयों का इस न्यायालय ने **Santram Janak Dewangan v. Shivprasad Garibram Dewangan AIR 2016 Chhattisgarh 150** के मामले में अनुसरण किया है, जिसमें इस न्यायालय ने निम्नलिखित निर्णय दिया:

"10. उपरोक्त विधि-स्थिति के अनुसार, प्रतिवादी, जो विक्रय अनुबंध के तहत वादग्रस्त भूमि के कब्जे में आया है, वह प्रतिकूल कब्जे का दावा नहीं कर सकता। अतः, मुझे अपीलित निर्णय और डिक्री में कोई गैरकानूनीता नहीं दिखती और इस द्वितीय अपील में कोई महत्वपूर्ण विधिक प्रश्न संलग्न नहीं है।"

35. अब उपरोक्त निर्णयों में प्रतिपादित विधि सिद्धांतों के प्रकाश में वर्तमान मामले के तथ्यों पर पुनः विचार करते हुए, यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि इस मामले में प्रतिवादी क्रमांक 1 के लिए प्रतिकूल कब्जे को प्रमाणित करने हेतु तीन क्लासिक आवश्यकताओं को प्रमाणित करना अनिवार्य था, अर्थात् – निरंतरता में पर्याप्तता, सार्वजनिकता में पर्याप्तता तथा प्रतिद्वंद्वी के प्रति प्रतिकूलता। इसके अतिरिक्त, उसे यह भी प्रदर्शित करना आवश्यक था कि वह किस तिथि को संपत्ति के कब्जे में आया, उसके कब्जे की



प्रकृति क्या थी, आदि, जैसा कि सर्वोच्च न्यायालय द्वारा Karnataka Board of Wakf (supra) के निर्णय में प्रतिपादित किया गया है। इस संबंध में लिखित वक्तव्य में किए गए कथनों का उल्लेख करना उपयुक्त होगा। लिखित वक्तव्य के अनुच्छेद 2 और 4 इस प्रकार हैं:

2... यह कि वाद पत्र की कंडिका 2 असत्य होने से अमान्य है। वाद भूमि पर प्रतिवादीगण का कब्जा निरन्तर, अबाध रूप से एवं शांति पूर्वक सन् 1955 के कई वर्ष पूर्व से चला आ रहा है और प्रतिवादीगण ही वाद भूमि की लगान निरन्तर देते आ रहे हैं। प्रतिवादीगण का कब्जा वाद भूमि पर पंचशाला खसरे में भी सन् 1955 के पूर्व से ही अंकित है और आत तक विधिवत अंकित होता चला आ रहा है।

4.... यह कि वाद पत्र की कंडिका क्रमांक 4 असत्य होने से अमान्य है प्रतिवादीगण ने वाद भूमि का कब्जा सन् 1967-68 में नहीं छीना है। वाद भूमि का कब्जा छीनने का प्रश्न ही नहीं उठता है, जबकि प्रतिवादीगण वाद भूमि पर सन् 1955 ई० के कई वर्ष पूर्व से ही काबीज होकर लगातार कास्त करते चले आ रहे हैं।

36. अतिरिक्त बयान में, कंडिका ग और ड में, प्रतिवादियों द्वारा निम्नलिखित कथन किया गया:

ग... यह कि वाद भूमि पर प्रतिवादीगण का लगभग 25 वर्षों से निरन्तर शांति पूर्वक कब्जा करने के कारण प्रतिवादीगण को विभुखाधिकार adverse possession के कारण भी स्वत्व प्राप्त हो चुका है।

ड.... यह कि वादी के पिता ने संयुक्त हिन्दू परिवार के कर्ता की हैसियत से वाद भूमि को बेचने का ठहरांव contract लिखित रूप में और अपनी दस्तखत से दिनांक 18.6.61 ई० को उचित मूल्य लेकर किया तथा प्रतिवादीगण उक्त तिथि 18.6.61 के पूर्व से ही वाद भूमि पर काबीज रहे और आज तक काबीज है। ठहरांव के आंशिक सम्पादन part performance of contract धारा 53 अ भू-अंतरण अधिनियम का सिद्धांत लागू होता है और प्रतिवादीगण उक्त ठहराव contract में निहित अपने कर्तव्य का पालन करते हैं, और भविष्य में भी करने के लिए तैयार





37. उपरोक्त प्रतिवादी क्रमांक 1 के कथन का सावधानीपूर्वक अवलोकन करने पर स्पष्ट होता है कि प्रतिवादियों ने वादग्रस्त भूमि के कब्जे में आने की कोई निश्चित तिथि नहीं दर्शाई, बल्कि केवल यह कहा कि वे 1955 से कई वर्ष पूर्व से कब्जे में हैं। इसके पश्चात, अतिरिक्त बयान ((para ड) में यह कहा गया कि उन्होंने वादी के पिता के साथ 18-6-1961 को बिक्री अनुबंध किया, लेकिन वे पहले से ही वादग्रस्त भूमि के कब्जे में थे और संपत्ति अंतरण अधिनियम, 1882 की धारा 53A लागू होती है।
38. अतः, प्रतिवादियों ने दावा किया कि वे 16-6-1961 (Ex.D-1) को हुए बिक्री अनुबंध से पहले ही वादग्रस्त भूमि के कब्जे में थे। यदि अंतरणकर्ता पहले से ही कब्जे में है, तो संपत्ति अंतरण अधिनियम, 1882 की धारा 53A अब भी लागू होगी।
39. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने Mohan Lal (supra) और Achal Reddy (supra) में स्पष्ट रूप से निर्णय दिया है कि जब दावा संपत्ति अंतरण अधिनियम, 1882 की धारा 53A पर आधारित होता है और दावा करने वाला यह स्वीकार करता है कि वह वादग्रस्त भूमि के कब्जे में विधिपूर्वक बिक्री अनुबंध के तहत आया और मुकदमे की तिथि तक कब्जे में बना रहा, तो उसका कब्जा अनुमोदित माना जाएगा, और वह प्रतिकूल कब्जे का दावा नहीं कर सकता। चूंकि प्रतिवादी का कब्जा Ex.D-1 बिक्री अनुबंध के तहत स्वीकार्य रूप से अनुमोदित था, इसलिए प्रतिकूल कब्जे की दलील उनके लिए उपलब्ध नहीं है।
प्रथम अपीलीय न्यायालय ने यह निर्णय देकर कि प्रतिवादियों ने प्रतिकूल कब्जे के माध्यम से अपना स्वामित्व प्रमाणित कर लिया है, गंभीर विधिक त्रुटि की है।
40. तदनुसार, महत्वपूर्ण विधिक प्रश्न प्रतिवादियों के विरुद्ध और वादियों के पक्ष में उत्तरित किया जाता है।
41. उपरोक्त चर्चा के परिणामस्वरूप, प्रथम अपीलीय न्यायालय का निर्णय एवं डिक्री निरस्त की जाती है और ट्रायल कोर्ट के निर्णय को बहाल किया जाता है। द्वितीय अपील, उपरोक्त सीमा तक स्वीकार की जाती है, तथा पक्षकारों को उनके स्वयं के व्यय वहन करने के लिए निर्देशित किया जाता है।
42. तदनुसार डिक्री तैयार की जाए।

एसडी/-

(संजय के. अग्रवाल)

न्यायाधीश